जलप्रबंधन का सामाजिक–ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य कोशी क्षेत्र के सन्दर्भ में।

डॉ0 मो0 रफत परवेज*

वैसे तो कोशी क्षेत्र जल के मामले में हमेशा से आत्मनिर्भर रहा है लेकिन कभी–कभी अत्याधिक आत्मनिर्भरता भी नई त्रास्दी को जन्म दे देता है। कोशी क्षेत्र में फैले अकुत जल संपदा का अगर सही प्रबंधन नहीं किया जाता तो आज कोशीवासी पहले की अपेक्षा कोशी की क्रुरता से ज्यादा विस्थापन का दंश झेलने को मजबूर होते। प्राथमिक स्त्रोत जो कि अधिक प्रमाणिक और महत्वपूर्ण होते हैं के आधार पर 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में प्रकाशित समाचार पत्र, बुकलेट समकालीन साहित्यों के आधार पर इसके प्रबंधन की सटीक एक विश्वसनीय जानकारी हमें मिलती है।

निश्चित ही कोशी का इतिहास प्राचीन काल से ही गौरवपूर्ण रहा है। अठारहों पूराणों, रामायण, महाभारत आदि ऐसा कोई धर्मग्रन्थ नहीं है जिसमें कौशिकी अथवा कोशी नदी तथा इसके किनारे बसे तीर्थों की चर्चा नहीं की गई है। भारत का प्रथम सांस्कृतिक भूगोलवेत्ता ने इस क्षेत्र का विवरण लिखा है। मध्यकाल में इस क्षेत्र में कई सांस्कृतिक, राजनीतिक हलचल हुए थे। लेकिन कोशी की विभीषिका ने इस क्षेत्र के पूरास्थलों स्मारकों, कलाकृतियों तथ ऐतिहासिक धरोहरों को नष्ट कर दिया।

आजकल जल प्रबंधन सम्पूर्ण विश्व में मानवता के समक्ष ज्वलंत समस्या बनकर उभरा है। वैज्ञानिक अविष्कारों ने जहाँ जीवनस्तर को काफी ऊँचा उठा दिया है और जनसंख्या भी बढ़ी है। प्राकृतिक संसाधनों के प्रचूर मात्रा में दोहन के परिणाम स्वरूप प्राकृतिक संसाधन और मानव सभ्यता के बीच का संतुलन डगमगाने लगा है और इससे कोशी क्षेत्र भी अछुता नहीं रहा है। सन् 1987 में कोशी पीड़ित विकास प्राधिकार की स्थापना हुई जो जल प्रबंधन के क्षेत्र में पूर्ण पड़ाव जैसा था। कोशी अपनी धाराओं को बदलने के लिए विख्यात रही है और धारा बदलने के साथ ही शुरू हो जाती है कोशी का तांडवनृत्य जो कोशीवासी को असमय ही काल के गाल में समा लेती है। चीन की वांगहो नदी के तरह कोशी भी ''बिहार के शोक'' (Sorrow of Bihar) के नाम से प्रसिद्ध है। जैसा कि विदित है कोशी क्षेत्र में बाढ़ की भयावहता का कारण जल जमाव एवं सिलटेशन है। कोशी समस्या के समाधान की पहल गहन तकनीकी विचार–विमर्श पश्चात एक राष्ट्रीय अभियान के रूप में हुआ। बराज और तटबंध से सिंचाई के लिए नहर प्रणाली का निर्माण भी हुआ। बराज और तटबंध के निर्माण से यह उम्मीद जगी थी कि कोशी क्षेत्र का कायाकल्प अब चन्द दिनों की ही बात है। बराज से इतनी मात्रा में जल विद्युत का उत्पादन होगा कि कोशी क्षेत्र विद्युत के मामले में आत्मनिर्भर होकर अतिरिक्त विद्युत को बेचकर समृद्धी की राह पर चल पड़ेगा। नहरों का जाल विछ जाएगा और कोशी क्षेत्र का हर खेत प्रचुर पानी की उपलब्धता से फसलों से लहलहा उठेगा लेकिन समस्या समाधान की योजना और बुने गए सपने सब के सब धरे रह गए जब योजना का कार्यान्वयन हुआ। सिल्टेशन की समस्या जस की तस रही। विद्युत उत्पादन का लक्ष्य भी अपेक्षा अनुरूप न हुआ। नहरों के निर्माण में किसानों को लाखों एकड़ जमीन बर्बाद हो गयी। नहरों में जमी सिल्टेशन के कारण साल के दस महीने नहरें सुखी ही रहती है।

जल आधारित कृषि और शुद्ध पेयजल की समस्या भी कोशी क्षेत्र वासियों के लिए किसी अभिशाप से कम नहीं है। प्राकृतिक रूप से जल सम्पदा में समृद्ध रहने के बावजूद यह क्षेत्र पिछड़े क्षेत्र की श्रेणी में अग्रणी रहा। इस क्षेत्र के जल आधारित कृषि से सम्बन्धित विभिन्न क्षेत्रों के आंकड़े गहन परिश्रम और अध्ययन के बाद एकत्रित किए गए है तथा उन आँकड़ों तथा तथ्यों का बारीकी से विश्लेषण कर जल आधारित कृषि के विभिन्न आयामों को उदघाटित किया गया है। कोशी क्षेत्र में भू–जल का स्तर बहुत उँचा है। भू–जल का अधिक दोहन होने के बावजूद 20–25 फिट की गहराई से चापाकल से पानी उपलब्ध हो जाता है। किन्तु वर्षा के पानी के साथ सतह पर फैले मलमूत्र और दूसरी अशुद्धियाँ भू–जल के सतह में मिल जाती है। अशुद्ध जल अनेक प्रकार की बैकटिरिया, अमीबा, प्रोटोजोआ से ग्रस्त हो जाती है और वैसे भी इस क्षेत्र के पानी में आयरण और आर्सैनिक की मात्रा ज्यादा है। कालांतर में पूर्णिया क्षेत्र जब बाढ़ से ग्रसित था तो पूर्णिया को ''काला पानी'' कहकर पुकारा जाता था।

जब हम बात 1900 से 1987 तक कोशी क्षेत्र में जलप्रबंधन के ऐतिहासिक सर्वेक्षण की करते है तो जल प्रबंधन की समस्याएँ और संभावनाएँ विचारणीय पहलू के रूप में उभर कर सामने आता है। कोशी क्षेत्र में जल प्रबंधन की समस्या आधुनिक युग में मानवता के समक्ष एक बड़ी त्रास्दी की तरह ही है। इस त्रास्दी से मुक्ति दिलाने के नाम पर औपनिवेशिक काल से ही सरकारी और गैर सरकारी

***डबल एम.ए, पी0एच0 डी0 (इतिहास) डी.बी.रोड, सहरसा (बिहार)**

स्तर पर प्रयत्न शुरू हो गए थे। स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात इस क्षेत्र के राजनीतिज्ञों, बुद्धिजिवियों की तत्परता से समस्या के समाधान की वृहद योजना बनाई गयी जो आधुनिक विश्व की महान योजना की श्रेणी में गिनी जाती है। कोशी नदी पर बराज के निर्माण को एक राष्ट्रीय उत्सव की तरह हाथों हाथ लिया गया। कोशी नदी को तटबंधों के द्वारा बाँध दिया गया। नहरों की एक प्रणाली कोशी बराज से सिंचाई के लिए निकाली गई। लेकिन ऐन–केन प्रकारेण बाँध निर्माण और नहर प्रणाली एक साथ कई समस्याओं के जनक के रूप में कुख्यात होता चला गया। तटबंध निर्माण पश्चात निवासियों को बाढ़ से मुक्ति तो मिली किन्तु अचानक ध्वस्त होने वाले तटबंधों से विनाश लीला ने इस क्षेत्र में मानवता के समक्ष नयी भीषण समस्या खड़ी कर दी। तटबंध ध्वस्त होने के बाद विनाश लीला का जो तांडव जल द्वारा होता है कि मानवता की रूह काँप जाए। ये तटबंध ध्वस्त होने के बाद तोप के गोले की तरह दरार से पानी निकलते हैं और शुरू हो जाता है जलमार्ग में तबाही का मंजर। बेघर लोग, मरते लोग, पानी में तैरते जानवर और इंसान की लाशें, चहूँओर पानी की चादर बिछ जाती मानो कभी इस क्षेत्र में रिहईश ही न रहा हो।

तटबंधों के निर्माण ने दूसरी सबसे बड़ी समस्या पूर्नवास समस्या को भी जन्म दिया। पूर्वी और पश्चिमी कोशी तटबंधों के बीच आज भी सैकड़ों गाँव पूर्नवास की समस्याओं से जुझ रहे हैं। दोनों तटबंधों के बीच सहरसा, सुपौल और मधुबनी जिले के लगभग 304 गाँव जिसकी आबादी लगभग 25 लाख के करीब है जो इस पूर्णकालिक समस्या से ग्रस्त है। तटबंध के बीच की जमीन बाहर से ऊँची हो गई है। नदी में गाद बढ़ने से नदी की गहराई कम होती जा रही है। दोनों तटबंधों के बीच जीवन यापन करने वाले निवासियों के लिए जुलाई से अक्टूबर का महीना किसी जहन्नुम के एहसास से कम नहीं होता। 25–30 लाख की आबादी के समक्ष आवास, स्वास्थ्य, यातायात, पेयजल, शौच, शिक्षा की गंभीर समस्या विकराल रूप धारण कर लेती है। इन उपरोक्त संकटो को झेलते हुए यहाँ के निवासियों की स्थिति मानसिक दिवालिए जैसी हो जाती है। हो भी क्यों न जब इसको मलत्याग, शौच और खाना पकाने का एक मात्र सहारा काठ की नाव हो। कोशी योजना बनने के साथ ही पूर्नवास योजना भी बनी जो आजतक मूर्त्तरूप नहीं ले सकी जबकि विधानसभा, संसद के अन्दर और बाहर भी इसके लिए आवाज बुलंद करने को कोशिशें नेताओं और आन्दोलनकारियों द्वारा आजतक जारी है।

1900 से 1987 तक कोशी क्षेत्र में जल प्रबंधन की समस्याओं पर निगाह देने के बाद लगता है कि शुद्ध पेयजल की व्यवस्था बहुत आवश्यक है। शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर Iron Removal Plant लगाने की आवश्यकता

है। तटबंधों का उचित रख रखाव हो जिससे तटबंध टुटने की नौबत ही न आए। तटबंध का पक्कीकरण किया जाय तथा यातायात योग्य बनाया जाए। तटबंध के बाहरी ढलानों पर वृक्षारोपन करके भी कटाव को रोका जा सकता है। जल जमाव वाले क्षेत्र का सर्वे करके जल आधारित कृषि यथा धान, मखाना, मछली पालन आदि का रोड मैप तैयार किया जाए। नदी जल को प्रदूषित होने से बचाया जाय। मलमूत्र, औद्योगिक कचरा कल कारखाने का कचरा, अस्पताल का कचरा आदि अपशिष्टों को नदी जल में मिलने से रोका जाय। सबसे बड़ी खुशी की बात ये है कि कोशी नदी आज भी गंगा और जमुना जैसी नदियों की तरह प्रदूषित नहीं है।

1900 से 1987 तक कोशी क्षेत्र में जल प्रबंधन की एक गंभीर समस्या सिंचाई की भी रही है। कोशी बराज और तटबंध निर्माण के पूर्व इस क्षेत्र में सिंचाई के परम्परागत साधन भी थे। वर्षा सिंचाई का प्राकृतिक और मुख्य साधन था किन्तु कुछ कृत्रिम साधन भी थे। जिसकी चर्चा फ्रांसिस हेमिलटन बुकानन के पूर्णिया रिर्पोट, J Byrne के पूर्णिया सर्वे एण्ड सेटलमेंट रिर्पोट, W.W. Hunter ds Statistical Account of Bengal तथा L.S.S. "O" mally के 1911 के पूर्णिया गजेटियर में हुआ है।

साठ सत्तर के दशक तक इस क्षेत्र मे तालाबों के सुखने के एक्के– दुक्के उदाहरण ही मिलते थे लेकिन आज की हालात में धड़ल्ले से तालाब सुख रहे हैं। इससे अनेकानेक समस्याएँ पैदा होने लगी है। पशुओं को स्नान कराने तथा पशुओं के लिए पेयजल की समस्या उठ खड़ी हुई है। यह कहने की जरूरत नहीं कि जल खासकर शुद्ध जल का हमारे जीवन में क्या महत्व है।

22 मार्च को विश्व जल दिवस का फैसला संयुक्त राष्ट्र ने 1992 में ही किया था। इसका मकसद था कि जल के संरक्षण और रखरखाव के प्रति विश्व में जागृति फैले। विश्व का 16 फीसदी आबादी भारत में है जबकि उसके लिए जल सिर्फ 4 फीसदी ही उपलब्ध है।

बारिश की एक–एक बूंद कीमती है। पहले कहा जाता था कि भारत वह देश है जिसके गोद में हजारों नदियाँ बसती है। लेकिन आज वे नदियाँ केवल सैकड़ों में होगी। इसी में से एक नदी कोशी है जो वर्ष 1700 से 1735 तक सौरा नदी के साथ प्रवाहित होती रही। गढ़बनैली, फारबिसगंज, कटिहार होते हुए यह मनिहारी में गंगा से मिलती थी। 1807 से 1838 तक कोशी पश्चिम की ओर खिसककर लच्छा धारा के साथ बहने लगी। पुनः 1840 से 1873 तक कोशी हाहा या हहिया धार का सहारा लेकर विध्वंसक बनने लगी। 1875 से 1892 तक कोशी सुरसर, बड़गाँव, मुरलीगंज होते हुए कुरसैला के रास्ते बहती रही। 1937 में कोशी ने अपनी स्वतंत्र धारा बनाई। 1952 में यह त्रियुगा को पार कर दरभंगा जिले की

सीमा में प्रवेश कर चूकी थी। यूँ कहा जाए कि 250 वर्षों में कोशी ने 80 मील पश्चिम तक की यात्रा की। इस यात्रा के पश्चात सहरसा जिले के सुखपुर, पंचगछिया, बनगाँव आदि क्षेत्र जो कभी अपनी हरियाली के कारण ''हँसते हुए बाग'' की उपाधि लिए हुए थे। कोशी ने इसे गोल्डस्मिथ के Deserted Village में परिणत कर दिया था। 1946 में Eastern Koshi Advisory Committee का गठन किया गया। 6 अप्रैल 1947 को कोशी पीड़ितों का एक अधिवेशन निर्मली में हुआ था जिसमें डा0 राजेन्द्र प्रसाद, सी0 एच भाभा, श्री कृष्ण सिंह, श्री राजेन्द्र मिश्र, श्री हरिनाथ मिश्र, श्री अनुग्रह नारायण सिंह, श्री बनारसी प्रसाद झुनझुनवाला आदि ने भाग लिया। इसी सम्मेलन में कोशी नदी को नियंत्रित करने के लिए बाँध ा बनाने की योजना प्रस्तुत की गई। 1954 में योजना प्रारंभ हुई और 31 मार्च 1963 को कोशी की धारा को नियंत्रित कर तटबंध में कैद कर लिया गया फलस्वरूप तकरीबन 1,50,000 की आबादी को विस्थापन का दंश झेलना पड़ा। किन्तु बाँध बनने के बावजूद कोशी की विनाशलीला नहीं रूकी। 1963, 1968, 1971, 1984, 1987, 2008 में कोशी तटबंधों को तोड़ती रही और अपने प्रलय और तांडव से बर्बादी की नयी दास्तान लिखती गई। संपूर्ण कोशी बाँध सिर्फ राजनीति की विसात बनकर और लुट के नये कारोबार का माध्यम बन कर रह गई। विडम्बना देखिए बिहार के इस शोक को लंदन के टेम्स नदी में बदलने का ख्वाब दिखाने वाले नेतागण वर्ष के तीन चार महीनें बयानबाजी करके कुंभकर्णी नींद में सो जाते है और एक बार फिर से कोशी पीड़ित विस्थापन और पूर्नवास के लिए टकटकी लगाए रह जाते है।

1984 में नवहट्टा के हेमपुर गाँव के सैकड़ों परिवार तथा 2008 के कुसहा त्रासदी में तबाह हुए हजारों परिवार आज भी विस्थापन का दंश झेलने को मजबूर है और उसके पूर्नवास के लिए सरकारी प्रयास सिर्फ ऊँट के मुँह में जीरा के समान ही साबित हो रहे हैं। मंडल कमिटी 1975 के अनुसार कोशी नदी में प्रतिवर्ष आ रहे 8600 एकड़ फीट सिल्ट, 9495 हेक्टर मीटर इस भूखण्ड पर सवालिया निशान छोड़ जाते है। 468 कि0मी0 लम्बी नदी जिसमें 220 कि0 मी0 कोशी नेपाल में बहती है जिसका जल ग्रहण क्षेत्र 74500 वर्ग कि0 मी0 है लेकिन गाद (सिल्टेशन) के कारण समृद्धि की प्रतीक और जीवन रेखा मानी जाने वाली ''कोशी'' आज ''शोक'' और दुःख का पर्याय बनी हुई है।

जलाभाव, जल प्रदूषण और जल प्रबंधन के आँकड़े वास्तव में घोर चिंता पैदा करने वाले हैं। इसका कुशल, न्यायोचित और निरंतर उपयोग पर समेकित रूप से विचार कर धरातलीय (महज कागजी नहीं) योजना बनाई जाए और इसके क्रियान्वयन पर कठोर निगरानी रखी जाए। भूगर्भीय जल के घटते स्तर पर विराम

लगाने की विधिक, वैज्ञानिक प्रशासनिक, समाजिक प्रयास एवं चेतना विकसित की जाए जल को मानवाधिकार बनाने संबंधी संयुक्त राष्ट्र के प्रयास को विश्व के सभी देश और समाज की सभी ईकाइयाँ संयूक्त रूप से और पूरी जिम्मेवारी के साथ समर्थन दे तो संभव है अन्य क्षेत्रों के नदियों की तरह ही अपनी ''कोशी'' भी ''शोक और दुःख'' की जगह'' ''हर्ष और उल्लास'' की पर्याय बन जाएगी।

पिछले दो दशकों के दौरान कोशी पूर्नवास के नाम पर कोई बदलाव या उपलब्धि दर्ज नहीं की गई है। इंतजार तो बस इन आँखों को है कि कब कोई दूसरा गाँधी या जयप्रकाश पैदा ले ? जिस तरह से इन दो महान विभूतियों ने देश में राजनैतिक जागरूकता का एहसास देशवासियों को कराया वैसा ही एहसास कराने वाला कोई सपूत इस कोशी मैया के गर्भ से भी निकले जो वर्षों से कोशी तटबंध पर गुंजते गीत ''आ आरे सोन चिड़ैया कए दे हमरो दुख दूर''..... के सार्थकता को सिद्ध कर सके।